संविधान संवाद शृंखला - 15

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर और भारतीय संविधान

विकास संवाद

शीर्षक
डॉ. बी.आर. अम्बेडकर और भारतीय संविधान
(संविधान संवाद शृंखला - 15)

लेखक
सचिन कुमार जैन

संपादन सहयोग
पूजा सिंह, राकेश कुमार मालवीय,
रंजीत अभिज्ञान, पंकज शुक्ला

संस्करण - प्रथम

वर्ष - 2023

प्रतियां - 1000

सहयोग राशि
छात्रों के लिए - ₹ 20
नागरिकों के लिए - ₹ 25
संस्थाओं के लिए - ₹ 30

मुद्रक - अमित प्रकाशन

सज्जा - अमित सक्सेना

प्रकाशक
विकास संवाद
ए-5, आयकर कॉलोनी, जी-3, गुलमोहर कॉलोनी,
बावड़िया कलां, भोपाल (म.प्र.) - 462039. फोन : 0755-4252789
ई-मेल : office@vssmp.org / www.vssmp.org
www.samvidhansamvad.org

डॉ. बी.आर अम्बेडकर और भारतीय संविधान

भारतीय संविधान के निर्माण में डॉ. अम्बेडकर की भूमिका निश्चित रूप से महत्वपूर्ण थी लेकिन यह कहना सही नहीं होगा कि उन्होंने ही संविधान बनाया। संविधान निर्माण में संविधान सभा के अनेक सदस्यों की अत्यधिक महत्वपूर्ण भूमिका थी। 25 नवंबर 1949 को संविधान का अंतिम मसौदा पेश करते हुए स्वयं डॉ. अम्बेडकर ने बी.एन. राऊ, मसौदा लेखक एस.एन. मुखर्जी, मसौदा समिति के सदस्यों समेत अनेक व्यक्तियों को इस बात का श्रेय दिया था कि उनके सहयोग से संविधान का ऐसा स्वरूप सामने आ सका। परंतु यह भी सच है कि डॉ. अम्बेडकर संविधान को लेकर काफी समय से काम कर रहे थे। उन्होंने 1945 में 'स्टेट ऐंड माइनॉरिटीज' नामक एक दस्तावेज बनाया था जिसे संविधान का आरंभिक रूप माना जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य अनुसूचित जाति समुदाय के लिए सुरक्षा तंत्र के विकल्प प्रस्तुत करना था।

भारतीय संविधान के निर्माण में डॉ. अम्बेडकर की भूमिका से न इनकार किया जा सकता है ना ही उसे कम करके आंका जा सकता है लेकिन यह कहना भी सही नहीं है कि उन्होंने अकेले भारत का संविधान बनाया। हां, संविधान के साथ डॉ. बी.आर. अम्बेडकर का नाम इस प्रकार जुड़ा हुआ है कि दोनों को एक दूसरे के बिना अधूरा कहा जा सकता है। उन्हें भारतीय संविधान का निर्माता भी कहा जाता है।

डॉ. अम्बेडकर और संविधान निर्माण

यह सच है कि संविधान निर्माण में डॉ. अम्बेडकर की महत्वपूर्ण भूमिका थी लेकिन यह तथ्य पूरी तरह सही नहीं है कि उन्होंने अकेले ही भारतीय संविधान तैयार किया था। डॉ. अम्बेडकर ने हमारे संविधान में न्याय, बंधुता और सामाजिक-आर्थिक लोकतंत्र जैसे भाव शामिल करने में एक निर्णायक भूमिका निभाई लेकिन वह संविधान के अकेले निर्माता या लेखक नहीं थे।

अन्य सदस्यों की अहम भूमिका

भारतीय संविधान के निर्माण की प्रक्रिया में कई सदस्यों ने ऐसी भूमिका निभाई थी जिसे किसी भी हालत में नकारा या नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है।

उदाहरण के लिए पंडित जवाहर लाल नेहरू ने लक्ष्य संबंधी प्रस्ताव पेश किया था। सरदार वल्लभ भाई पटेल ने मूलभूत अधिकारों और अल्पसंख्यक समुदायों के हितों की सुरक्षा के लिए बनी समिति का समन्वय किया था।

जयपाल सिंह मुंडा ने आदिवासी समाज के अधिकारों को लेकर संविधान में अहम भूमिका निभाई थी और डॉ. एस. राधाकृष्णन ने संविधान को भारतीय दर्शन से जोड़ा था। मौलाना हसरत मोहानी ने भारतीय संविधान के जनवादी पक्ष को सामने रखा था।

इन सबके बीच डॉ. अम्बेडकर ने जो सबसे अहम काम किया, वह था समाज के सबसे वंचित तबकों यानी दलित समाज की मानवीय गरिमा को संविधान के केंद्र में स्थापित करना। अपने निजी जीवन में उन्हें जिस तरह की जातिवादी

उपेक्षा, छुआछूत, शोषण और हिंसा का सामना करना पड़ा था उसके बाद उन्होंने तय कर लिया था कि वे भारत की सामाजिक–आर्थिक–राजनीतिक व्यवस्था में से अमानवीय मनुवाद को निकाल बाहर करेंगे।

साझा पहल का नतीजा

वास्तविकता यह है कि भारत का संविधान एक साझा पहल का नतीजा है। भारत की संविधान सभा ने 29 अगस्त 1947 को मसौदा (प्रारूप) समिति के गठन का निर्णय लिया। इस समिति की भूमिका को स्पष्ट करते हुए कहा गया कि 'परिषद (संविधान सभा) में किए गये निर्णयों को प्रभाव देने के लिए वैधानिक परामर्शदाता (श्री बी.एन. राऊ) द्वारा तैयार किए गये भारत के विधान (संविधान) के मूल विषय की जांच करना, उन सभी विषयों के जो उसके लिए सहायक हैं या जिनकी ऐसे विधान में व्यवस्था करनी है और कमेटी द्वारा पुनरावलोकन किए हुए विधान के मसौदे के मूल रूप को परिषद के समक्ष विचारार्थ प्रस्तुत करना।'

डॉ. अम्बेडकर ने संविधान सभा में इस विषय में एक महत्वपूर्ण वक्तव्य दिया था। उनके इस वक्तव्य के माध्यम से भी तथ्यों को आंका जा सकता है। उन्होंने 25 नवंबर 1949 को संविधान सभा में संविधान का अंतिम मसौदा प्रस्तुत करते हुए कहा था:

> 'जो श्रेय मुझे दिया जाता है, वास्तव में मैं उसका अधिकारी नहीं हूं। उसके अधिकारी श्री बी.एन. राऊ हैं, जो इस संविधान के संविधानिक परामर्शदाता हैं और जिन्होंने मसौदा समिति के विचारार्थ संविधान का मोटे रूप में मसौदा बनाया। कुछ श्रेय मसौदा समिति के सदस्यों को भी मिलना चाहिये, जिन्होंने 141 दिन तक बैठकें कीं। उनके नये सूत्र खोजने के कौशल के बिना तथा विभिन्न दृष्टिकोणों के प्रति सहनशील तथा विचारपूर्ण सामर्थ्य के बिना संविधान बनाने का कार्य इतनी सफलता के साथ समाप्त न हो पाता। सबसे अधिक श्रेय इस संविधान के मुख्य मसौदा लेखक

श्री एस.एन. मुखर्जी को है, बहुत ही जटिल प्रस्थापनाओं को सरल से सरल तथा स्पष्ट से स्पष्ट वैध भाषा में रखने की उनकी योग्यता की बराबरी कठिनाई से की जा सकती है। इस सभा के लिए वे एक देन स्वरूप थे। उनकी सहायता न मिलती तो इस संविधान को अंतिम स्वरूप देने में कई और वर्ष लगते। यदि यह संविधान सभा विभिन्न विचार वाले व्यक्तियों का एक समुदाय मात्र होती, एक उखड़े हुए फर्श के समान होती, जिसमें हर व्यक्ति या हर समुदाय अपने को विधिवेत्ता समझता तो कार्य बहुत कठिन हो जाता। तब यहां सिवाय उपद्रव के कुछ नहीं होता। सभा में कांग्रेस पक्ष की उपस्थिति ने इस उपद्रव की संभावना को पूरी तरह से मिटा दिया। इसके कारण कार्यवाहियों में व्यवस्था और अनुशासन दोनों बने रहे। कांग्रेस पक्ष के अनुशासन के कारण ही मसौदा समिति यह निश्चित जानकर कि प्रत्येक अनुच्छेद और प्रत्येक संशोधन का क्या भाग्य होगा, इस संविधान का संचालन कर सकी। अतः इस सभा में संविधान के मसौदे के शांत संचालन के लिए कांग्रेस पक्ष ही श्रेय का अधिकारी है। यदि इस पक्ष के अनुशासन को सब लोग मान लेते तो संविधान सभा की कार्यवाही बड़ी नीरस हो जाती। यदि पक्ष के अनुशासन का कठोरता से पालन किया जाता तो यह सभा 'जी हुजुरों' की सभा बन जाती। सौभाग्यवश कुछ द्रोही थे। श्री कामत, डॉ. पी.एस. देशमुख, श्री सिधावा, प्रो. सक्सेना और पंडित ठाकुर दास भार्गव थे। इनके साथ-साथ मुझे प्रो. के.टी. शाह और पंडित हृदयनाथ कुंजरू का भी उल्लेख करना चाहिए। जो प्रश्न उन्होंने उठाये, वे बड़े सिद्धान्तपूर्ण थे। मैं उनका कृतज्ञ हूं। यदि वे न होते तो मुझे वह अवसर नहीं मिलता, जो मुझे इस संविधान में निहित सिद्धांतों की व्याख्या करने के लिए मिला और जो इस संविधान के पारित करने के यंत्रवत कार्य की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण था।'

– डॉ. बी.आर. अम्बेडकर, 25 नवंबर,1949

भारत शासन अधिनियम और हमारा संविधान

डॉ. अम्बेडकर पर अक्सर यह इल्जाम भी लगाया जाता है कि भारतीय संविधान का निर्माण करने के दौरान ब्रिटिश उपनिवेशवादी व्यवस्था के तहत बनाये गये भारत शासन अधिनियम (1935) का पूरी तरह अनुकरण ही कर लिया गया। यह बात संविधान सभा में भी उठी और इसके लिए उन्हें काफी आलोचना का सामना भी करना पड़ा। इस विषय में पंडित बाल कृष्ण शर्मा ने कहा:

'इस विषय पर
जो कुछ मैं कह सकता हूं, वह यह कि
मसौदा समिति, डॉ. अम्बेडकर और उन सबके लिए
जिन्होंने उनका साथ दिया, यह गौरव की बात है कि वे संकीर्णता
की किसी भी भावना से प्रेरित नहीं हुए। आखिर हम एक संविधान बना
रहे हैं और हमारे सामने आधुनिक प्रवृत्तियां, आधुनिक कठिनाइयां, और
आधुनिक समस्याएं हैं और अपने संविधान में हमें इन सबके लिए
उपबंध करना है और इस कार्य के लिए यदि हमने भारत शासन
अधिनियम का सहारा लिया, तो हमने कोई
पाप नहीं किया है।'

संविधान निर्माण के चार चरण

संविधान सभा में संविधान पर काम को चार चरणों में पूरा किया गया:

पहला चरण – पहले चरण में सबसे पहले संविधान के लक्ष्य संबंधी प्रस्ताव पर चर्चा और बहस की गयी। जिसके बाद उसे स्वीकार भी किया गया। इसके साथ ही नियम निर्माण समिति और सभा संचालन समिति का गठन भी किया गया। 22 जनवरी 1947 को संविधान सभा ने उन आठ लक्ष्यों को स्वीकार किया, जिन्हें हासिल करने के लिए संविधान बनाया जाना था।

दूसरा चरण – दूसरे चरण में संविधान सभा द्वारा विभिन्न विषयों (मूलभूत और अल्पसंख्यकों के अधिकार, संघ की शक्तियां, प्रांतीय और संघ अधिकार समिति आदि) पर प्रारूप और प्रावधानों के प्रतिवेदन बनाने के लिए विभिन्न समितियों का गठन किया गया। संघ शक्ति समिति में 9 सदस्य थे, इसके अध्यक्ष पंडित जवाहर लाल नेहरू थे। संचालन समिति में 3 सदस्य थे और इसके अध्यक्ष थे डॉ. कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी। प्रांतीय विधान समिति में 25 सदस्य थे और अध्यक्ष थे सरदार वल्लभ भाई पटेल। संघ विधान समिति में 15 सदस्य थे और अध्यक्ष थे पंडित जवाहर लाल नेहरू।

इन समितियों की रिपोर्ट्स संविधान सभा में प्रस्तुत की गयीं और उन पर खूब बहस हुई। इन समितियों के प्रतिवेदनों को समग्र स्वरूप देते हुए संविधान सभा के सलाहकार बी.एन. राऊ ने संविधान का पहला प्रारूप तैयार किया। इस प्रारूप की समीक्षा के लिए सर अल्लादी कृष्णस्वामी अय्यर की अध्यक्षता में एक समिति बनायी गयी।

तीसरा चरण – तीसरे चरण में संविधान सभा ने 29 अगस्त 1947 को संविधान का मसौदा तैयार करने के लिए प्रारूप समिति का गठन किया। इस समिति का अध्यक्ष डॉ. भीमराव अम्बेडकर को बनाया गया। इस समिति ने बी.एन. राऊ द्वारा तैयार मसौदे पर काम किया।

चौथा चरण – चौथे चरण में प्रारूप समिति ने फरवरी 1948 में अपना मसौदा प्रकाशित किया। सभा के सदस्यों को इसके अध्ययन के लिए करीब आठ महीने का समय मिला। नवंबर 1948 से 17 अक्टूबर 1949 तक कई बैठकों के माध्यम से इस प्रारूप पर सिलसिलेवार चर्चा आयोजित की गयी। संविधान के तीसरे और अंतिम प्रारूप पर 14 नवंबर 1949 को चर्चा आरंभ हुई और 26 नवंबर 1949 को संविधान पारित भी कर दिया गया। सघन बहस में पेश किए गये सुझावों पर विचार करते हुए संविधान के मसौदे को अंतिम रूप प्रदान किया गया। यह काम डॉ. अम्बेडकर के नेतृत्व में पूरा किया गया। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि संविधान सभा में संविधान पर तीन स्तरों पर बहस हुई।

एक-एक वाक्य पर विमर्श

संविधान निर्माण के दौरान संविधान सभा ने संवैधानिक समस्याओं पर विचार करने के लिए कई समितियों का गठन किया था जिन्होंने बहुत अच्छी तरह काम किया। इस दौरान सभी संभावित पहलुओं पर गंभीरतापूर्वक विचार किया गया। न केवल मसौदा समिति बल्कि अन्य सदस्यों ने भी जरूरी होने पर एक-एक वाक्य और शब्द पर विमर्श किया:

'संविधान के संबंध में जिस रीति को अपनाया गया, उसके अंतर्गत सबसे पहले 'विचारणीय बातें' निर्धारित की गयीं, जो कि लक्ष्य मूलक संकल्प के रूप में थीं, जिसे पंडित जवाहर लाल नेहरू ने ओजस्वी भाषण द्वारा पेश किया और जो अब हमारे संविधान की प्रस्तावना है। इसके बाद संवैधानिक समस्याओं के भिन्न-भिन्न पहलुओं पर विचार करने के लिए कई समितियां नियुक्त की गयीं। इनमें से कई समितियों के सभापति या तो पंडित जवाहर लाल नेहरू थे या सरदार पटेल। इस प्रकार हमारे संविधान की मूलभूत बातों का श्रेय इन्हीं को है। मुझे केवल यह कहना है कि इन सब समितियों ने उचित कार्य किया और अपने-अपने प्रतिवेदन प्रस्तुत किए। सभी ने उन पर विचार किया और उनकी सिफारिशों को उन आधारों के रूप में ग्रहण किया, जिन पर संविधान का मसौदा तैयार किया गया। यह कार्य बी.एन. राऊ ने किया। उन्होंने इस कार्य में अन्य देशों के संविधानों के पूर्ण ज्ञान और देश की दशा के व्यापक ज्ञान तथा अपने प्रशासनिक ज्ञान का भी पुट दिया। इसके बाद सभा ने मसौदा समिति नियुक्त की, जिसने श्री बी.एन. राऊ द्वारा निर्मित मूल मसौदे पर विचार किया और संविधान का मसौदा बनाया। जिस पर द्वितीय पठन की स्थिति में इस सभा ने विस्तारपूर्वक विचार किया। जैसा कि डॉ. अम्बेडकर ने बताया था कि 7,635 से कम संशोधन प्रस्ताव नहीं थे। जिनमें से 2,473 संशोधन पेश किए गए। मैं केवल यह सिद्ध

करने के लिए कह रहा हूं कि केवल मसौदा समिति के सदस्य ही इस संविधान पर दत्तचित्त होकर अपना ध्यान नहीं दे रहे थे, वरन अन्य सदस्य भी सचेत थे और मसौदे की पूर्णरूप से जांच परख कर रहे थे। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि मसौदे में केवल प्रत्येक अनुच्छेद पर ही नहीं वरन लगभग प्रत्येक वाक्य और कभी-कभी तो प्रत्येक अनुच्छेद के प्रत्येक शब्द पर हमें विचार करना पड़ा।'

- डॉ. राजेन्द्र प्रसाद

(26 नवम्बर 1949 को संविधान सभा की कार्रवाई समाप्त करते हुए)

सहभागी और सहिष्णु संविधान

भारत का संविधान एक साझा, प्रतिबद्ध और मूल्य आधारित प्रक्रिया से निर्मित विधान है। इसमें विचारों, समुदायों और संस्कृतियों के साथ-साथ विविध राजनीतिक धाराओं की सक्रिय भागीदारी रही है। यह संविधान केवल राज्य व्यवस्था के नियम ही निर्धारित नहीं करता है, बल्कि व्यक्तियों की सामजिक-राजनीतिक-आर्थिक आज़ादी की व्याख्या भी करता है। ऐसा इसलिए हो पाया क्योंकि यह एक सहभागी और सहिष्णु प्रक्रिया के साथ बनाया गया संविधान था।

संविधान को लेकर डॉ. अम्बेडकर के पुराने कार्य

हम सभी जानते हैं कि डॉ. अम्बेडकर संविधान सभा की उस समिति के सभापति थे, जिसने भारतीय संविधान का दूसरा प्रारूप तैयार किया। संविधान का पहला प्रारूप संविधानिक परामर्शदाता बी.एन. राऊ द्वारा तैयार किया गया था। डॉ. अम्बेडकर ने संवैधानिक प्रावधानों और शब्दों को अर्थ देने में बेहद महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

एक बात जिसका उल्लेख करना आवश्यक है वह यह कि अम्बेडकर अपने स्तर पर भारतीय संविधान को लेकर काफी पहले से काम कर रहे थे। उन्होंने वर्ष 1945 में अनुसूचित जाति फेडरेशन (जिसकी स्थापना 1940 के दशक के आरंभ

में उन्होंने स्वयं की थी) के लिए 'स्टेट्स एंड माइनॉरिटीज़' (राज्य और अल्पसंख्यक/अल्पमत) नाम से एक दस्तावेज तैयार किया था। संविधान के रूप में ही लिखे गये इस दस्तावेज का मुख्य उद्देश्य अनुसूचित जाति समुदाय के लिए सुरक्षा तंत्र के विकल्प प्रस्तुत करना था। इसकी प्रस्तावित उद्देशिका में उन्होंने लिखा था – 'हम ब्रिटिश शासित भारत के प्रांतीय और केंद्र प्रशासित क्षेत्रों और भारतीय राज्यों के लोग' प्रांतीय और केंद्र प्रशासित क्षेत्रों को मिलाकर एक व्यवस्थित संघ बनाने के मकसद से व्यवस्थित विधायिका, कार्यपालिका और प्रशासनिक उद्देश्यों के लिए संयुक्त राज्य भारत के रूप में निम्न लक्ष्यों से एकजुट होते हैं –

1. अपने और अपनी भावी पीढ़ी के लिए संयुक्त राज्य भारत में स्व–शासन और सुशासन की स्थापना।
2. जीवन के हर पक्ष में जीवन, स्वतंत्रता, खुशहाली, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और अपने धर्म को मानने की स्वतंत्रता की सुनिश्चितता।
3. समाज के वंचित और उपेक्षित वर्गों को बेहतर अवसर उपलब्ध करवाकर सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक असमानता को ख़त्म करना।
4. हर व्यक्ति को भय और दबाव से स्वतंत्रता मिलना।
5. देश की भीतरी सुरक्षा और बाहरी आक्रमण/घुसपैठ से सुरक्षा के लिए संयुक्त राज्य भारत का संविधान बनाया जाना।

उन्होंने अपने संविधान में लिखा कि नागरिकों के मौलिक अधिकार के रूप में संयुक्त राज्य भारत में जन्मे व्यक्ति की पदवी, जन्म, व्यक्ति, परिवार, धर्म और परंपरा आधारित विशेषाधिकार और वंचना को खत्म किया जाता है। राज्य ऐसा कोई क़ानून नहीं बनायेगा, जो नागरिक के अधिकार और प्रतिरक्षा को सीमित करता हो और किसी उचित क़ानून या क़ानून की प्रक्रिया के बिना जीवन,

स्वतंत्रता और संपत्ति के अधिकार से नागरिक को वंचित करता हो। हर व्यक्ति क़ानून के समक्ष समान होगा। सभी नागरिक क़ानून के सामने समान हैं, और ऐसा कोई भी क़ानून, रीति-रिवाज़, परम्परा, आदेश, जिनके तहत किसी दंड या सज़ा का प्रावधान है, इस संविधान के लागू होते ही निष्प्रभावी हो जायेंगे। किसी भी तरह का और किसी भी स्थान पर भेदभाव अपराध होगा। बंधुआ और जबरिया मजदूरी करवाना अपराध होगा। इसके अलावा प्रेस, मतदान, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, धर्म परिवर्तन की स्वतंत्रता को शामिल किया और लिखा कि राज्य किसी धर्म को राज्य धर्म (राज्य के धर्म) के रूप में मान्यता नहीं देगा। असमानता के व्यवहार, सामाजिक-आर्थिक शोषण, भेदभाव, छुआछूत से मुक्ति के लिए प्रावधान किया।

स्वतंत्र भारत को लेकर अम्बेडकर की चिंताएं

डॉ. अम्बेडकर के मन में स्वतंत्र भारत के हालात को लेकर भी कुछ चिंताएं थीं। उनका मानना था कि भारत को पूर्ण स्वराज्य मिल जाने के बाद भी समाज के भीतर छुआछूत, भेदभाव, शोषण और असमानता बनी रहेगी क्योंकि स्वतंत्र होने के बाद भारत की शासन व्यवस्था पर उन लोगों और समूहों का आधिपत्य होगा, जो जातिवादी, वर्ण और लैंगिक भेद आधारित साम्प्रदायिक स्वभाव रखते हैं। शायद यही कारण है कि उन्होंने 1945 के अपने प्रस्तावित संविधान में ब्रिटिश शासित भारत की ही संकल्पना की थी। ऐसा नहीं है कि वे भारत की स्वतंत्रता के खिलाफ थे, सच तो यह है कि उन्हें ब्रिटिश शासन से मुक्ति मिलने के बाद के भारत के भीतर बनने वाले हालातों का अंदाजा था। उन्हें लगता था कि ब्रिटिश सरकार के माध्यम से सामाजिक-आर्थिक बदलाव लाना संभव होगा।

उन्होंने संवैधानिक संरचना की व्याख्या करते हुए यह बताने की कोशिश की थी कि अनुसूचित जाति समुदाय के मौलिक अधिकारों के हनन को रोकने लिए क्या व्यवस्था होगी? इससे यह स्पष्ट होता है कि उनके लिए केवल इतना पर्याप्त

नहीं था कि संविधान में मौलिक अधिकारों का उल्लेख भर कर दिया जाए, बल्कि उन अधिकारों के संरक्षण और उनकी सुरक्षा की व्यवस्था एक बुनियादी अनिवार्यता थी। उन्होंने एक तरह से इस दस्तावेज में 'समाजवादी राज्य' और 'आर्थिक प्रजातंत्र' की अवधारणा पेश की। डॉ. अम्बेडकर का सोचना था कि हम ऐसी व्यवस्था बनायेंगे जिसमें सभी समुदायों को राज्य संस्थानों में समान प्रतिनिधित्व हासिल होगा। हालांकि वे पृथक निर्वाचिका का प्रावधान संविधान सभा में पारित नहीं करवा पाये, लेकिन वे राज्य विधानसभाओं और संसद में अनुसूचित जाति–जनजाति समूहों के लिए निर्धारित स्थान आरक्षित करवाने में सफल रहे।

अधिकारों को लेकर अम्बेडकर के विचार

डॉ. अम्बेडकर का मानना था कि अधिकारों को केवल क़ानून के जरिये संरक्षित नहीं किया जा सकता है। वे मानते थे कि क़ानून हमारी सामाजिक और नैतिक चेतना से भी संरक्षित होते हैं। यदि सामाजिक चेतना उन अधिकारों को मान्यता देने के लिए तत्पर होती है, जो क़ानून द्वारा निर्धारित किए हैं तभी अधिकार सुरक्षित होंगे।

> यदि समाज खुद मौलिक अधिकारों के खिलाफ़ हो, तो कोई क़ानून, कोई संसद, कोई न्यायपालिका अधिकारों की सुरक्षा सुनिश्चित नहीं कर सकती है। क़ानून अधिकारों का उल्लंघन करने वाले किसी एक व्यक्ति को दण्डित कर सकता है, या सज़ा दे सकता है, किन्तु क़ानून भी ऐसे लोगों के व्यापक समूह के खिलाफ़ कार्यवाही नहीं कर सकता है, जो क़ानून के उल्लंघन के लिए प्रतिबद्ध हैं।

एक लोकतांत्रिक सरकार यह धारणा लेकर चलती है कि समाज भी लोकतांत्रिक है, लेकिन लोकतंत्र की औपचारिक व्यवस्था तब तक बेमानी और बेमेल है, जब तक कि सामाजिक लोकतंत्र (खुद समाज का लोकतांत्रिक होना) स्थापित न हो। राजनीतिक विचारक यह महसूस नहीं कर पाये कि लोकतंत्र सरकार की

व्यवस्था का रूप नहीं है, यह समाज की व्यवस्था का एक रूप है। किसी लोकतांत्रिक समाज के लिए यह जरूरी नहीं है कि उसे एकरूपता, उद्देश्यों की समानता, लोगों के प्रति वफादारी, एक-दूसरे के प्रति सहानुभूति से चिन्हित किया जाये, लेकिन इसमें दो तत्व जरूर शामिल हैं – एक: मानसिक प्रवृत्ति, गरिमा की प्रवृत्ति व दूसरे के प्रति समानता का भाव और दो: कठोर सामाजिक बाधाओं और भेदभाव की भावना से मुक्त समाज।

क्या अम्बेडकर समाजवादी व्यवस्था चाहते थे?

उस दौर के दस्तावेजों से तो यही लगता है कि अम्बेडकर ऐसा ही चाहते थे। वर्ष 1945 में प्रकाशित एक दस्तावेज में डॉ. अम्बेडकर ने समाजवादी राज्य व्यवस्था का ही सपना देखा था। उनका मानना था:

देश के मुख्य उद्योग पूरी तरह से राज्य के अधीन होंगे।

आधारभूत उद्योग सहकारी पद्धति से संचालित होंगे।

बीमा क्षेत्र पर राज्य का नियंत्रण होगा।

इतना ही नहीं, वे कृषि को राज्य नियंत्रित संपत्ति और व्यवस्था के रूप में देख रहे थे। डॉ. अम्बेडकर ने लिखा था कि इस व्यवस्था को लागू करने के लिए राज्य निजी क्षेत्र या व्यक्तियों के मालिकाने में शामिल मुख्य उद्योगों, बीमा और कृषि भूमि को उनके मूल्य के मुताबिक़ डिबेंचर्स के रूप में मुआवजा प्रदान करके अधिग्रहीत करेगा। खेती के बारे में उनका मॉडल अकल्पनीय था। इस दस्तावेज के मुताबिक़ कृषि क्षेत्र की व्यवस्था इस तरह होगी –

1. राज्य, अधिग्रहित की गयी भूमि को गांव के लोगों में समान रूप से वितरित करके परिवारों के समूह को सहकारी/साझा खेती के लिए प्रदान करेगा।

2. खेती के लिए राज्य नियम और निर्देश जारी करेगा। खेती से हुई आय को, खेती करने में हुए व्यय को हटाकर, सभी सहभागी परिवारों में बांटा जायेगा।

3. भूमि का आवंटन/किराये पर देने की प्रक्रिया में वंश, जाति, वर्ग के आधार पर कोई भेद नहीं होगा। इसका मतलब यह है कि कोई भी भू स्वामी नहीं होगा, कोई किरायेदार नहीं होगा और कोई भी भूमिहीन मजदूर नहीं होगा।

4. राज्य की जिम्मेदारी होगी कि वह खेती की प्रक्रिया का पानी, खेती में सहयोगी पशुओं का पालन, कृषि उपकरण, खाद और बीज की आपूर्ति के जरिये वित्तपोषण करेगा।

5. राज्य कृषि भूमि पर एक निश्चित शुल्क लगा सकेगा। भारत के बुनियादी ढांचे में बदलाव के लिए उन्होंने भूमि सुधार के लिए प्रावधान किए थे। इसके मुताबिक़ नये संविधान में एक व्यवस्थापन आयोग बनाया जायेगा, जो गैर-कृषि योग्य भूमि का उपयोग अनुसूचित जातियों के आवास/व्यवस्थापन के लिए करेगा। इस आयोग को ऐसे उद्देश्य के लिए जमीन खरीदने का भी अधिकार होगा।

इन बातों से यह पता चलता है कि डॉ. अम्बेडकर अपने मूल विचारों को भारत के आधिकारिक संविधान में शामिल नहीं करवा पाये। इतना ही नहीं कुछ स्तरों (मसलन आर्थिक अधिकारों को मौलिक अधिकार के रूप में मान्यता देना) पर उन्होंने बाद में अपने ही विचारों को आगे नहीं बढ़ाया।

डॉ. अम्बेडकर केंद्रीकृत व्यवस्था के समर्थक नजर आते हैं, क्योंकि उन्हें लगता था कि समाज के नियम और उसका चरित्र समाज को बदलने नहीं देगा, इसलिए वे बहुत ताकतवर राज्य व्यवस्था चाहते थे।

संवैधानिक नैतिकता पर अम्बेडकर

आज़ाद भारत के लिए एक 'सभ्यता मूलक और लोकतांत्रिक व्यवस्था' की कल्पना करना कितना कठिन रहा होगा, यह डॉ. बी.आर. अम्बेडकर के उस वक्तव्य से स्पष्ट हो जाता है, जो उन्होंने 4 नवम्बर 1948 को संविधान सभा में संविधान के प्रारूप पर बहस शुरू करते हुए दिया था। उन्होंने कहा था कि 'भारतीय भूमि स्वभावत: अप्रजातंत्रात्मक है और भारत में संवैधानिक नैतिकता नहीं है।' संवैधानिक नैतिकता पर सभा में कम ही चर्चा हुई थी, लेकिन डॉ. अम्बेडकर इसे ही संविधान का 'श्वसन तंत्र' मानते थे। आज़ादी के बाद भारत ने संविधान को अपना लिया, लेकिन संविधान की संवाहक 'संवैधानिक नैतिकता' को नहीं अपनाया जा सका।

संवैधानिक नैतिकता का अर्थ क्या है?

संवैधानिक नैतिकता का मतलब है राजनीतिक दलों, न्यायपालिका, कार्यपालिका, विधायिका, सामाजिक संगठनों और नागरिकों का संवैधानिक मूल्यों और उस पर निर्मित व्यवस्था में विश्वास होना। जब समाज सजग होगा, तब वह प्रश्न पूछेगा ही और ऐसी स्थिति में स्पष्ट है कि राज्य व्यवस्था और सरकार आलोचना के अधीन होगी। सरकार का आलोचना के अधीन होना भी संवैधानिक नैतिकता का सूचक है।

संवैधानिक नैतिकता का एक सूचक बहुलता और विविधता भी है। इसे हृदय और व्यवहार की गहराइयों से अपनाया जाना लोकतंत्र के वजूद की बुनियादी शर्त है। यदि बहुलता और विविधता के तत्व को समाज अपनाएगा, तो हिंसा की भाव अपने आप निष्क्रिय हो जाएगा। इसीलिए डॉ. अम्बेडकर 'बंधुता' के मूल्य को सबसे आधारभूत सामाजिक-राजनैतिक मूल्य मानते रहे।

संवैधानिक नैतिकता का एक सूचक यह भी है कि कोई भी व्यक्ति अपने आप को पूरे समाज या देश का प्रतिनिधि घोषित नहीं करता है। जब एक व्यक्ति या एक समूह को देश का प्रतिनिधि स्थापित करने की कोशिश हो, तब उस कोशिश और उन समूहों पर गहरी शंका व्यक्त की जाना चाहिए।

ऐसा इसलिए क्योंकि एक व्यक्ति को सबके प्रतिनिधि के रूप में स्थापित करके लोकतंत्र के मूल्यों और लोकतांत्रिक व्यवस्था को ख़त्म करने की साजिश रची जाती है।

आसान नहीं थी राह

वास्तव में भारत के लिए ऐसे गुणों से लैस संविधान बनाना बहुत ही दुरूह काम था, क्योंकि वास्तव में भारत एक समान स्वरूप वाला राष्ट्र नहीं था। वास्तव में राजनीतिक–आर्थिक स्वार्थों ने भारत की विविधता को इसकी सबसे बड़ी ताकत बनाने के बजाय, इसकी सबसे बड़ी कमजोरी बना दिया था।

> वास्तव में भारत के सामने खड़ी चुनौतियां से जूझते हुए डॉ. अम्बेडकर ने जो भूमिका निभाई, सच्चाई तो यह है कि उसी के कारण भारत एक विधान के माध्यम से समग्र राष्ट्र का रूप ले पाने में सक्षम हुआ।

हालांकि डॉ. अम्बेडकर को खुद भी यह अहसास था कि भारत की सामाजिक–आर्थिक–राजनीतिक व्यवस्था इस संविधान को उसकी मूल भावना के साथ लागू नहीं होने देगी, क्योंकि इस संविधान को लागू करने के लिए, देश में छुआछूत, जातिवादी व्यवहार, लैंगिक भेदभाव, आर्थिक असमानता पैदा करने वाली नीतियों को तिलांजलि देने सरीखे कदम उठाये जाने होंगे, जिनके लिए भारत का समाज बहुत तत्पर नहीं रहा।

इसके साथ ही सत्ता हासिल करने के लिए लालायित भारत की राजनीति ने भी इन प्रश्नों पर बहुत प्रभावी रुख नहीं अपनाया।

तानाशाही को लेकर दूरंदेशी उपाय

डॉ. अम्बेडकर जानते थे कि अच्छा संविधान बन जाने के बावजूद सत्ता और सरकार पर देश के 2–3 प्रतिशत लोगों का ही कब्ज़ा रहेगा। यही कारण है कि उन्होंने ऐसी व्यवस्था बनाने की कोशिश की, जिसमें एक व्यक्ति या एक छोटे समूह की तानाशाही स्थापित न हो पाए। संविधान का प्रारूप प्रस्तुत करते हुए उन्होंने कहा कि भारत का राष्ट्र प्रमुख राष्ट्रपति होगा, किन्तु वह अकेले कोई भी निर्णय न ले पायेगा।

अमेरिका के राष्ट्रपति को शासन के सभी अधिकार प्राप्त हैं। उसके अधीन कई सचिव होते हैं, जो भिन्न-भिन्न विभागों के अधिकारी होते हैं, वे चुने हुए प्रतिनिधि नहीं होते हैं। जबकि स्वतंत्र भारत में राष्ट्रपति राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करता है, किन्तु राष्ट्र पर शासन नहीं करता है। उसके अधीन विभिन्न विभागों के मंत्री होते हैं, ये मंत्री राज्यसभा या लोकसभा के सदस्य होते हैं। यही मंत्रिमंडल अपनी राय से राष्ट्रपति को अवगत करवाता है।

सामान्तः यह राष्ट्रपति की बाध्यता होती है कि वह मंत्रिमंडल की राय को माने। वह उनकी राय के प्रतिकूल कुछ नहीं कर सकता है। अमेरिकी राष्ट्रपति किसी भी सचिव को कभी भी हटा सकता है, किन्तु भारत का राष्ट्रपति किसी मंत्री को तब तक नहीं हटा सकता, जब तक कि मंत्रिमंडल को बहुमत प्राप्त है।

भारतीय सामाजिक व्यवस्था के चरित्र, स्वरूप और स्वभाव में व्याप्त चुनौतियों और जटिलताओं को समझते हुए ही संविधान में कई प्रक्रियाओं की भी व्याख्या की गयी है, क्योंकि यह माना गया था कि यदि संविधान को सूत्रों में लिखा जाएगा, तो आने वाली सरकारें और प्रभावशाली राजनीतिक दल अपने स्वार्थों के लिए संवैधानिक मूल्यों से समझौता करते जायेंगे।

संवैधानिक लोकतंत्र और वर्तमान परिस्थितियां

डॉ. अम्बेडकर ने संविधान सभा में कहा था कि कार्यपालिका में स्थिरता होनी चाहिए और उसे दायित्वपूर्ण होना चाहिए। इसी तर्क के आधार पर संविधान में लोकतांत्रिक व्यवस्था को अपनाया गया उन्होंने कहा कि भारत जैसे देश में कार्यपालिका वर्ग के दायित्वों की दैनिक छानबीन बहुत आवश्यक है। यह कार्य संसद की प्रक्रियाओं के जरिये किए जाने की व्यवस्था की गई। जहां सवाल-जवाब होते हैं। प्रश्न पूछे जा सकते हैं, अविश्वास प्रस्ताव, स्थगन प्रस्ताव और अभिभाषण पर बहस हो सकती है।

आज अगर हमारी संसद में बहस कमज़ोर हो रही है, मनमाने तरीके से क़ानून बन रहे हैं या संशोधित किए जा रहे हैं, तो इसका मतलब है कि कार्यपालिका बहुमत का अश्लील इस्तेमाल करके संविधान की मूल भावना की उपेक्षा कर रही है।

राज्य व्यवस्था पर अम्बेडकर के विचार

डॉ. अम्बेडकर संविधान के मसौदे का जिक्र करते हुए कहते हैं कि यह मसौदा ऐसी राज्य व्यवस्था स्थापित करता है जिसे हम द्विमुखी राज्य व्यवस्था कह सकते हैं। इसमें संघ राज्य (यानी केंद्र सरकार) और प्रादेशिक राज्य (राज्य सरकार) हैं, और इन दोनों को ही प्रभुता प्राप्त है, जिसका प्रयोग वे संविधान के मानकों के मुताबिक़ कर सकते हैं। संघ और राज्य सरकारों के दायित्वों और अधिकारों का निर्धारण बेहद संजीदा सोच विचार के बाद किया गया। डॉ. अम्बेडकर ने इस विषय पर कहा कि जरा कल्पना करें कि हमारे यहां 20 राज्य हैं और सभी में विवाह, तलाक, उत्तराधिकार, फौजदारी क़ानून, बैंकिंग और व्यवसाय और न्याय व्यवस्था के 20 अलग अलग क़ानून हैं, तब नागरिकों का क्या होगा? इससे राज्य कमज़ोर होगा। वे एक स्थान से दूसरे स्थान नहीं जा सकते हैं। इस स्थिति को ध्यान में रखकर देश में एक न्याय व्यवस्था, मूलभूत क़ानूनों और नियमों में एकरूपता और आवश्यक पदों पर नियुक्ति के लिए देश में एक लोक सेवा व्यवस्था का प्रावधान किया गया। इसके दूसरी तरफ शिक्षा,

स्वास्थ्य, भूमि क़ानून, रोज़गार नीतियां, कृषि आदि पर राज्य सरकारों को कायदे-क़ानून बनाने का अधिकार दिया गया।

भविष्य की आशंकाएं और अम्बेडकर

उस समय
एक भय यह भी व्यक्त किया
गया था कि डॉ. अम्बेडकर केंद्र सरकार (संघ
व्यवस्था) को बहुत ज्यादा अधिकार संपन्न बना रहे हैं।
इसका जवाब देते हुए उन्होंने कहा था कि देश को एक बना
रखने के लिए शक्तिशाली केंद्र एक आवश्यकता है, शायद वे यह
नहीं भांप पाए कि आने वाले सालों में प्रभावशाली राजनीतिक
विचारधाराएं भ्रष्ट पूंजी के साथ मिलकर भारत में संघीय लोकतंत्र
की अवधारणा को कमज़ोर कर सकती हैं। आप देखेंगे कि आज
आर्थिक संसाधनों से लेकर, शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि तक की
व्यवस्थाओं पर केंद्र ने अपना नियंत्रण स्थापित कर
लिया है और राज्य सरकारों को अपंग
बना दिया है।

लेकिन यह सच नहीं है कि डॉ. अम्बेडकर लोकतन्त्र के सन्दर्भ में भविष्य की आशंकाओं से वाकिफ नहीं थे। उन्होंने संविधान सभा में ही इतिहासकार जार्ज ग्रोट के संदर्भ से कहा कि किसी भी स्वतंत्र और शांतिपूर्ण सरकार के लिए यह अनिवार्य है कि वैधानिक नैतिकता का प्रसार न केवल वहां के बहुसंख्यक लोगों में हो, बल्कि देश के सभी नागरिकों में किया जाए क्योंकि कोई भी शक्तिशाली, हठी, अल्पमत वाला वर्ग, चाहे वह स्वयं इतना शक्तिसंपन्न न हो कि शासन की बागडोर अपने हाथ में ले सके, पर स्वतंत्र-शासन का कार्य संचालन दुरूह या कठिन तो बना ही सकता है।

संविधान की प्रासंगिकता

आज भी भारत का संविधान प्रासंगिक बना हुआ है क्योंकि संविधान निर्माता ये जानते थे कि भारत में 'सामाजिक विधानों' (जिनमें भेदभाव, छुआछूत, असमानता और हिंसा के कई रूप मौजूद हैं) का ज्यादा प्रभाव रहेगा और 'संवैधानिक विधानों' की मौजूदगी बहुत कमज़ोर रहेगी क्योंकि समाज आने वाले समय में उन्हीं राजनीतिक दलों को शासन का अधिकार देगा, जो 'सामाजिक विधानों' को बनाए रखने के लिए शासन करने के लिए तैयार रहेंगे। हुआ भी यही, जाति, आर्थिक भेद, हिंसा और पूँजी की लूट भारतीय राजनीति के केंद्र में स्थापित होते रहे। इसी आशंका को भांपते हुए संविधान में कई छोटी-छोटी बातों का उल्लेख किया गया ताकि आने वाले सरकारें संविधान को पूरी तरह से ख़तम न कर दें। इसी कारण से भारत का संविधान विश्व का सबसे बड़ा लिखित संविधान बन गया।

डॉ. अम्बेडकर ने कहा था कि 'संविधान को लागू करने के लिए वैधानिक नैतिकता बुनियादी जरूरत है। क्या हम वैधानिक नैतिकता का प्रसार संभव मानते हैं? वैधानिक नैतिकता की भावना स्वाभाविक, प्रकृति जन्य नहीं होती है। इसे तो अभ्यास द्वारा अपनाना होगा। हमें यह जानना चाहिए कि हमारे देशवासियों को अभी भी इसे सीखना है। भारतीय भूमि स्वभावत: ही अप्रजातांत्रत्मक है और यहां प्रजातंत्र केवल एक ऊपरी आवरण है। ऐसे में शासन के नियमों के निर्धारण का काम विधान मंडल पर न छोड़ना ही बेहतर है।'

“

डॉ. अम्बेडकर मानते थे कि 'प्रजातंत्रात्मक संविधान को शक्तिपूर्ण तरीके से चलाने के लिए 'नैतिकता' का प्रसार आवश्यक है, किन्तु इससे जुड़ी हुई दो बातें दुर्भाग्य से लोग नहीं जानते हैं - एक: शासन के तरीके (सरकार किसके हितों को प्रधानता देगी, नागरिकों की मूल जरूरतों को कल्याणकारी नज़रिये से देखेगी या नहीं, क़ानून का उपयोग जनहित के लिए करेगी या अहित के लिए, साम्प्रदायिक व्यवहार करेगी, पूंजी के एकाधिकार को संरक्षण देगी या नहीं आदि) का संविधान की व्यवस्था से गहरा संबंध है। इसका मतलब यह है कि सरकार किस मंशा से संविधान का पालन करेगी, यह महत्वपूर्ण है। दो: संविधान के स्वरूप को बदले बिना ही, केवल शासन प्रणाली में परिवर्तन करके संविधान को पूर्णत: उलट देना और शासन को संविधान की भावना के अनुरूप या प्रतिकूल बना देना बिलकुल संभव है। इससे यही निष्कर्ष निकलता है कि जहाँ पर 'वैधानिक नैतिकता' का प्रसार है, वहीं हम शासन के विस्तार (शासन के तरीकों की छोटी से छोटी बातें) की बातों को विधान में न रखकर विधान मंडल (संसद) पर छोड़ सकते हैं।'

”

संविधान संवाद पुस्तिका शृंखला

- संविधान और हम
- भारतीय संविधान की विकास गाथा
- जीवन में संविधान
- भारत का संविधान – महत्वपूर्ण तथ्य और तर्क
- संविधान निर्माण की पृष्ठभूमि
- संवैधानिक व्यवस्था : एक परिचय
- संविधान की रचना प्रक्रिया
- संविधान सभा में स्वतंत्रता का घोषणा पत्र
- संविधान की उद्देशिका से परिचय
- संविधान : मूल अधिकार और नीति निदेशक तत्व
- संविधान और रियासतें
- संविधान बोध और संवैधानिक नैतिकता
- भारत के संविधान के रोचक किस्से
- भारत का राष्ट्रीय ध्वज : तिरंगे की कहानी
- डॉ. बी.आर. अम्बेडकर और भारतीय संविधान
- गांधी का संविधान
- संविधान और आदिवासी
- स्वाधीनता, स्वतंत्रता और संविधान
- संविधान और समाजवाद तथा आर्थिक समानता
- संविधान और सांप्रदायिकता
- संविधान और चुनाव प्रणाली
- संविधान और न्यायपालिका
- संविधान और अल्पसंख्यक
- इंसानी व्यवहार में लोकतंत्र के होने का मतलब

पुस्तकें पाने के लिए संपर्क करें –
vikassamvadprakashan@gmail.com / 0755 - 4252789

'संविधान संवाद' शृंखला क्यों?

जब हम किसी विषय के बारे में अनभिज्ञ रहते हैं तो कोई फर्क नहीं पड़ता है लेकिन जब हम उसके बारे में जानना शुरू करते हैं तो फिर हर पहलू को टटोलने, जानने और समझने की आवश्यकता और ललक होती है।

भारतीय संविधान से जुड़ी तमाम जानकारियों को जानने की उत्कंठा के कारण ही 'विकास संवाद' ने 'संविधान संवाद शृंखला' आरंभ की है। इसका उद्देश्य संविधान की विकास गाथा को जानना, उसके उद्देश्य को समझना तथा तय लक्ष्यों की प्राप्ति में हम नागरिकों के कर्तव्यों के बोध की पहल करना है।

यह संवैधानिक मूल्यों के आत्मबोध से उन्हें आत्मसात करने तक की यात्रा है।

विकास संवाद

Azim Premji Foundation